गुरुवाणी

जब बड़े कुछ बोलें उसको अपने दिमाग में, अपने मन में, अपने व्यवहार में उतारने की चेष्टा करें।

–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015

वर्ष-१५, अंक २०, वाराणसी। शुक्रवार ३० अक्टूबर २०१५ ई० सहयोग राशि ४.२५

जीवात्मा

जीवात्मा का अर्थ प्राणी के शरीर एवं आत्मा के संयोग से है। यानि पिण्ड सत्ता में परमात्म सत्ता के समाहित होने से ही जीवात्मा का प्रादुर्भाव है। हम कह सकते हैं कि परमसत्ता यानि सर्वव्यापक के ही शक्ति भूत अंश जीवात्मा कहलाता है। आत्मा के लिये शरीर में प्रविष्ट करना उसी तरह महत्वपूर्ण है। जिस तरह शिव के साथ शक्ति का सायुज्य है। बिना शक्ति के शिव को शववत कहा जाता है। परमात्म शक्ति के जीवात्म के साथ विभिन्न प्राणियों के शरीर धारण करने को हम कह सकते हैं कि जैसे मूल तत्त्व मिट्टी से कुम्भकार नाना प्रकार के बर्तनों का निर्माण करता है। यद्यपि स्थूल रूप में आत्मा का कोई रूप नहीं होता परन्तु वह जीव के साथ मिलकर आकृति एवं चलने फिरने का आभास करा देता है। जैसे आकाश तत्त्व प्रत्येक प्राणियों में विराजमान है। उसी प्रकार आत्म तत्त्व प्रत्येक जीवधारियों में अदृश्य रूप में उसे चलायमानन करता है। परमात्मा के अंश आत्मा को निर्विकार सर्वव्यापी बिना रूप, रंग जो अदृश्य है, के भाव से प्रकट किया जाता है। क्योंकि आत्मा को **''नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणी, नैनं दहति पावकः न चैनं क्लेदअन्त्यापि न शोषयति मारुतः''** से निरुपित किया गया है। इसे विशेष कर मानव शरीर में मन के ऊपर यानि सर्वोच्च सत्ता से विभूषित किया जाता है। अस्तु, चंचल मन को नियंत्रण में रखने हेतु एवं मानव को अनुशासन बद्ध, लयबद्ध जीवन जीने हेतु आत्मा का ही लगाम उसे नियंत्रित करता है एवं सद्प्रेरणा देता है। आत्माराम के चिन्तन से हमारी मनोवृत्तियों को सदा सकारात्मक के लय में पिरोया जाता है। बड़े सरकार यानी पूज्यपाद अवधूत भगवान राम जी के प्रिय भजन में ''स्वात्माराम, आत्माराम, आत्माराम, आत्माराम'' की लय गूँजती रहती थी जो जनमानस को एकाग्र करके सन्मार्ग पर सतत चलने की स्वमेव प्रेरणा देती थी।

आत्मा के उद्भव को लेकर वेदों एवं पुराणों में नाना प्रकार की उक्तियाँ उद्धृत की गयी है जिसमें **''एको ब्रह्मो द्वितीयो नास्ति''** यानि एकात्म ब्रह्म से समस्त सृष्टि का उद्भव कहा गया है। हम कल्पना कर सकते हैं कि सृष्टि के प्रारम्भ में सत्त्व तत्त्व यानि परमात्म सत्ता की ही व्यापकता थी एवं उसी बीज रूप से सृष्टि में अनेक रूप मूर्तिमान हुए हैं यानि यह जगत उसी परम सत्ता का अंश हैं। इसे बड़े ही संक्षेप में व सारगर्भित रूप में क्रींकुण्ड स्थल, वाराणसी के बारादरी में वर्तमान में भित्ति चित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है। सर्वशक्तिमान सत्ता को जगन्मयी परम अम्बा सर्वेश्वरी के रूप में दिखाया गया है, जिसे अघोरेश्वर की आत्मिक शक्ति के रूप में प्रकट होकर चराचर विश्व के पदार्थों, प्राणियों आदि आदि के निर्माता के रूप में दर्शाया गया है। जैसे बीज से उत्पन्न होकर वृक्ष क्रमशः सखा, पत्रादि रूप से विकास को प्राप्त होता है तथा अन्त में पुनः बीज रूप में परिणित होकर नाश को प्राप्त करता है। वैसे ही यह जगत बारम्बार विकास तथा लय के क्रम को बनाये रखता है। परम सत्ता जिस प्रकार अनादि है उसी प्रकार सृष्टि भी अनादि है। प्रत्येक प्राणी अदृश्य शक्ति से संचालित होकर अपने में गति-शक्ति, शारीरिक शक्ति, अन्न पाचन शक्ति, चिन्ता शक्ति, आध्यात्मिक शक्ति ये सारी क्रियाएँ जीवधारियों के आत्मा के संयोग के कारण ही सफल हुआ है। जीवात्मा का शाब्दिक अर्थ अभ्यन्तर से लगाया जाता है। चलती भाषा में कहा जाता है कि हर कार्य एकनिष्ठ मानव को मनोयोग से करते रहना चाहिये। इसका स्पष्ट तात्पर्य है कि आत्मा से उस कार्य को किया जाय जिससे मन की चंचलता लगभग न्यून अथवा शून्य हो जाये। यद्यपि मन, कर्म, वचन से पुकार को ही आत्मा की पुकार कहते हैं। जीवात्मा मन पर युक्ति के साथ एक सिखावन की तरह कार्यरत रहती है। कहीं आत्मा को सांसारिक बुराईयों यथा लोभ, लालच, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष आदि से ढँक दिया जाय तो फिर मानव का चंचल मन जीव को कहीं का नहीं छोड़ता। एवं पददलित कर देने के लिये अग्रसर हो जाता है। जबकि जीवात्मा हर तरह से अविच्छिन्न सुख-शान्ति एवं समृद्धि के रास्ते पर ले जाने के लिये अग्रसर रहती है। जीवात्मा का कार्य मानव जीवन के निर्धारित अवधि में उसे उसके वास्तविक रूप से दिग्दर्शन कराना एवं पुनर्जन्म से मुक्ति कराना होता है। तृष्णा के वशीभूत होकर मृगमरीचिका से आप्त होकर जब शरीर व्यर्थ में भटकने लगता है जिससे शरीर के अवयवों में भी शक्ति संवर्धन की कमी आ जाती है तथा जीवन अनुशासन हीन होकर क्षीण होने लगता है तो आत्मा को भी यह पसंद नहीं आता एवं प्राकृतिक रूप से ऐसे शरीर का साथ छोड़ देती है। अस्तु, मानव का जीवन जो स्वप्न सदृश्य है। इससे यदि ससमय हम सभी महत्वपूर्ण कार्य को नहीं कर लेते। एवं अहंकार के चलते अनेकानेक कुकृत्यों में लिप्त होकर पतन की स्थिति में पहुँचते हैं तो यह जीवन अभिशापित हो जाता है तथा आत्मा भी इसे पुनः सन्मार्ग पर लाने में असमर्थ रहती हैं। इसीलिये हमारे ऋषि, मुनियों ने प्रातःकाल उठकर शुभ संकल्प लेने को उचित बताया है ताकि आत्मा दिनोंदिन प्रबल हो और जो कुछ भी आपके चित्त में शुभ उदित हो वह सभी कार्य तद्नुसार आपके द्वारा किये जाये एवं आत्मशक्ति का उत्तरोत्तर विकास हो। कहा जाता है कि कष्ट मन या शरीर को होता है जबकि आत्मा इन आघातों से विरत रहती है। यद्यपि मानव के साथ ही सारे प्राणियों में उसी आत्मिका के शक्ति का संचार है। जिसे परमात्म शक्ति कहते हैं। लेकिन मानव के व्यवहार एवं कलुष स्वार्थी व्यवस्था के फलस्वरूप हमारे समाज में अवनति, अत्याचार का द्वार भी खुला है। जिसका कुप्रभाव निरन्तर आने वाली पीढ़ियों पर पड़ रहा है। अतः दूसरे के मंगल में अपना मंगल तथा अमंगल में अपना अमंगल समझना आत्मा की प्रवृत्ति है। जबकि इसके विपरीत मन महास्वार्थी है। इस प्रकार आत्मिक शक्ति विशेष कर मानव जीवन का रक्षक है। जो सूक्ष्म रूप में शरीर में विराजमान रहकर सद्गुणों की ओर मानव बुद्धि को लगाया रहता है। प्रायः लोगों को यह अनुभव होता है कि उनका मन ठीक नहीं है। जिसका प्रभाव उनके परिवार तथा शरीर पर भी पड़ता है। कहा जाता है कि जो जैसा सोचता या करता है वैसा बन जाता है। यानि उसका आचार, विचार, व्यवहार उसी ढाँचे में ढल जाता है। जब मनुष्य को अचानक किसी विपत्ति अथवा असामान्य स्थिति का सामना करना पड़ता है तो उसे अपने आत्मा और मन को एक लय में रखकर एकाग्र होकर उसके निराकरण हेतु सोचने को बाध्य होना पड़ता है जिससे एक विराट शक्ति के रूप में हमारे अन्दर अपनी आत्मा का प्रतिबिम्ब बन खड़ा होता है और इसी प्रचण्ड शक्ति के सहारे मनुष्य बड़े-बड़े असम्भव कार्य को भी सम्भव कर दिखाता है। यही कारण है कि पुरुषार्थी व्यक्ति अपने आत्मा से कार्य के प्रति समर्पित होकर अपनी कर्त्तव्यपरायणता से ही असाधारण व्यक्तित्व का स्वामी बन जाता है एवं

शेष पृष्ठ दो पर

दीप पर्व

प्रत्येक वर्ष शारदीय नवरात्र के पश्चात् कार्तिक मास में अमावस्या के दिन हम दीपावली पर्व यानि दीप पर्व मनाकर ऋषियों, पूर्वजों द्वारा उद्भूत परम्परा का अनुपालन करते आ रहे हैं। दीपावली पर्व हम सबके जीवन में **''तमसो मा ज्योतिर्गमय''** का भाव लेकर आता है जिसमें हम दीपमालिकायें सजाकर माता लक्ष्मी की पूजा-अर्चना एवं उपासना करते हैं। दीपावली पर्व के अवसर पर हमलोग अपनी आर्थिक स्थिति का भी लेखा जोखा करते हैं। एवं सपरिवार खुशियाँ मनाते हैं। आर्थिक क्षेत्र में भी कैसे सद्गुणों को धारण कर अच्छाईयों के साथ हम आगे बढ़ें, लक्ष्मी माता के कृपा पात्र बनें। इसी सोच समझ को विकसित करने का पर्व दीपावली है। अपने सामर्थ्यानुसार अर्जन कर उपयोगी कार्य में मितव्ययिता के साथ नीतिपूर्वक धन खर्च करना, श्रम एवं न्याय से धनोपार्जन करना इस दीप माला पर्व का शुभ संदेश है। हम सब जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के सुधार से परिवार, समाज या राष्ट्र का सुधार अपेक्षित हैं। मितव्ययी व्यक्ति धन को सावधानीपूर्वक जहाँ आवश्यक है वही समझदारी से खर्च करने का महारत हासिल किया रहता है।

दीपावली का पर्व भगवान राम के द्वारा अन्याय यानि रावण को पराजित करने, दण्ड देने के पश्चात् अयोध्या आगमन के फलस्वरूप मनाये जाने की परम्परागत प्रथा है जिसे हम आज भी बड़े उत्साह से मनाते हैं। जिसमें हमें अज्ञान से ज्ञान की ओर बढ़ने एवं लक्ष्मी के साथ गणेश की भी पूजा करने तथा अपने आस-पास के वातावरण को स्वच्छ एवं प्रकाशित करने के साथ ही अपने आत्मा एवं मन को दूषित विचारों से हटाकर स्वच्छ विचारों को प्रतिष्ठित करना ध्येय होता है। लक्ष्मी के साथ गणेश पूजन का अर्थ है खर्च करने में विवेक पूर्ण ध्यान का होना एवं कुपथ पर पांव न देना। जबकि सामाजिक कुरीतियों के फलस्वरूप समाज के कुछेक धनाढ्यों के साथ ही साथ गरीब वर्गों के मनुष्यों द्वारा जुआ खेलना भी प्रचलित है जिससे हारने तथा जीतने वाले दोनों का ही पतन अवश्यम्भावी है। जीतने वाला अनाचार से प्राप्त पैसे का कदापि सदुपयोग नहीं कर सकता। जबकि हारने वाला तो पर्व के दौरान मन से खिन्न होकर अपना सब कुछ खो देता है। अस्तु, बुराईयों को फटकने भी न देना तथा प्रकाश पर्व को अपने अन्तस में धारण कर प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर ओज, तेज एवं वर्चस में वृद्धि हो इसकी कामना की जानी चाहिये। दीपावली के बाद भईया-दूज का भी त्योहार कार्तिक शुक्ल पक्ष द्वितीया को मनाया जाता है। जिससे भाई बहन का अक्षुण्ण प्यार परस्पर बना रहता है।

आइये अघोरेश्वर की कृपा से अनुप्राणित होकर दीप माला के इस पवित्र पर्व के अवसर पर हम सब मिलकर एक नये समाज का सृजन करें जिससे उत्तरोत्तर प्रकाश का पर्व हमारे लिये मंगलकामनायें लेकर आयें जिससे हमारा जीवन हर अंधकार से सतत मुक्त रहे। हम अपने घर के बच्चों को भी इस पवित्र त्योहार में प्रविष्ट खामियों से भी अवगत करावें यानी उन्हें ध्वनि प्रदूषण, वातावरण प्रदूषण के कारक पटाखों, आतिशबाजियों के अतिशय प्रयोग से दूर रखने का प्रयास करें।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ **0542-2277155.**

e-mail–kinaram@rediffmail.com

www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

जीवात्मा

अद्भुत शक्ति से प्रेरित होकर अपनी सहनशीलता एवं सामर्थ्य को बढ़ाकर दुरूह कार्य को भी चुटकी में कर डालता है। आत्मा में उत्पन्न हुई इच्छा को मन भी पालन करता है एवं कार्य के दौरान यदि कोई कष्ट भी होता है तो मन उत्साह एवं प्रसन्नता से पूरित रहता है। जिससे हम धैर्यपूर्वक विपत्तियों का भी सामना कर कठिनाईयों को भी विस्मृत कर देते हैं। अत: आत्मा की पवित्रता से मन भी प्रसन्न रहता है। जबकि अनेकानेक समस्याओं से उलझा हुआ मनुष्य की आत्म शक्ति जब कमजोर होती है तो मन भी खिन्न हो जाता है एवं उसका स्पष्ट कुप्रभाव हमारे शरीर पर भी पड़ता है। इसीलिये कहा गया है कि **''मन के हारे हार है, मन के जीते जीत''** यानि शरीर के साथ मन का अविच्छिन्न सम्बन्ध है एवं आत्म शुद्धि से मन को भी दिव्य एवं परिष्कृत रखकर मनुष्य प्रगतिशीलता का अवलम्बन बड़े ही आसानी से कर लेता है। ध्यातव्य है कि मानव इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है आत्म शक्ति डालकर नियन्ता ने उसे कौशल से भरापूरा बनाकर सुखी एवं समृद्ध बनाने की भी शक्ति प्रदान की है। अत: मनुष्य के अन्दर प्रगति के समस्त साधन सुषुप्ता अवस्था में पड़े रहते है। यदि वह अपने आत्मिक शक्ति को जागृत कर मन को तद्नुसार आचरण करने को नियंत्रित करता रहे तो इसी का नाम दैवीशक्ति है एवं शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के दु:ख दूर हो जाते हैं। कहने का तात्पर्य है कि जीवात्मा और मन के अटूट सम्बन्ध को एकाग्रता से एक करके मन:शक्ति को दिव्य एवं अलौकिक बनाया जा सकता है। जिससे मनुष्य निरुद्देश्य या लक्ष्य विहीन जीवन से सदा विरत हो सकता है एवं इसके विपरीत वह स्वालम्बी सधे व्यक्तित्व वाला व्यक्ति बनकर संतुष्ट व शान्त चित्त बना रहता है। मानव जीवन का प्रत्येक कर्म शरीर के माध्यम से ही होता है। **''शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम्''** जबकि विपरीत कर्म उसे नकारात्मकता की ओर मोड़ते है जिसे स्वर्ग के विपरीत हम नर्क की ओर गमन करते हैं। यही जीवन कीड़े-मकोड़ों का होता है। अत: अपने कार्यानुसार ही मनुष्य निकृष्टता एवं उत्कृष्टता का पदधारक बना रहता है। अस्तु, सच्चे मन से, आत्मा से अपने भूलों का पश्चाताप कर भविष्य में निर्मल जीवन जीने की प्रतिज्ञा की जाये तो वह अवश्य ही फलदायी होती है इसे ही सच्चे हृदय की प्रार्थना कहते हैं। फलत: मनुष्य शारीरिक ही नहीं आन्तरिक रोगों से भी छुटकारा पा जाता है। मनुष्य के मार्ग में सबसे बड़ा रोड़ा अहंकार का भी होता है। जिन लोगों को थोड़ी बहुत प्रसिद्धि या प्रतिष्ठा मिल जाती है वह स्वयं को अद्वितीय एवं दूसरे लोक का समझने लगते हैं। जिससे वे पुन: अवनति के गर्त में गिर जाते हैं। यदि हम प्रत्येक सृजन एवं संहार में अपने कर्तापन के अहं भाव को भूलकर भूतभावन भगवान शंकर के मंगलमय हाथों का दर्शन करें एवं परमात्म शक्ति पर विश्वास करें तो मानव निरन्तर अविचलित कार्यशील रहेगा तथा परिणाम की दुश्चिन्ता उसे उद्वेलित नहीं करेगी। तथा अन्तर्रात्मा से संतोषी, प्रफुल्ल, आशावादी, विश्वास एवं सद्भावना से परिपूर्ण बना रहेगा।

यद्यपि संसार में आकर मानव अपनी अभिलाषा पूर्ण करने की चाहत में अपना जीवन ऐसे रंगों से चित्रित कर लेता है जिससे वह लक्ष्य को न पाकर इधर उधर भटकने को बाध्य होता है। वास्तविक विकास से वह दूर हो जाता है। सफलता के लिये धैर्यपूर्वक किये गये कार्य के साथ ही हमारी आत्मिक शक्ति का संकेत सत्कर्म की ओर लगा रहे, परोपकार से जुड़ा रहे तो सहज में ही आत्मविश्वास, आत्म संतुष्टि, आत्म सम्मान, आत्म गौरव इत्यादि गुणों से व्यक्ति आच्छादित हो जाता है तथा हम और अत्यधिक सबल होकर प्रकृति के साधनों का सदुपयोग करेंगे तथा मनुष्य अपने सत्कर्म से अपने अन्दर की परमात्म शक्ति को और अधिक सबल कर दैवीय गुणों से युक्त कर लेता है। आत्म चिन्तन सच्चे मार्ग एवं परमार्थ की भावना स्वत: खोलती है आत्म शक्ति को जगाने का कष्ट उठाना पड़ता है क्योंकि सांसारिक भौतिकता इतनी सुन्दर दिखायी देती है कि हम उसी मोह रूपी दरिया में बिना सोचे समझे डुबकियाँ लगाते हैं और परिणाम के फलस्वरूप दोष उस परमपिता परमात्मा को देते हैं तथा अपने अक्षमता का दोष भी ईश्वर पर ही थोप देते हैं। जीवन में जिसने भी आत्मा की प्रेरणा लेकर संघर्ष किया उसे सुफल की अवश्य प्राप्ति हुई है। जिस प्रकार घर्षण के कारण चन्दन में अग्नि उत्पन्न की जा सकती है। उसी प्रकार मनुष्य भी अपने शान्त प्रकृति के अवलम्बन को लेकर जीवन धन्य बना सकता है एवं सतत आत्म ग्लानि से दूर रहता है। यद्यपि कबीरदास जी ने जीव एवं आत्मा के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए कहा है कि-

''जल में कुम्भ, कुम्भ में जल है
बाहर भीतर पानी।
फूटा कुम्भ जल, जल ही समाना
यह तत परम गयानी।।

स्पष्ट है कि शरीर को त्यागने के पश्चात् आत्मा अपनी परम शक्ति परमात्मा में ही पुन: विलीन हो जाती है। इसीलिये मानव जीवन को क्षणभंगुर कहा गया है। इस प्रकार अपनी आत्म शक्ति को केन्द्रित कर हम परमार्थ कार्यों को ही करते रहे जिससे आत्मा में परमात्मा का रूप दृष्टिगोचर होता रहे एवं हमारा जीवन जीवनपर्यन्त संतुष्टि के साथ शान्तिमय बना रहे।

कीनाराम आश्रम, अहमदाबाद

गोस्वामी जी के शब्दों में-

''जब जब होहिं धर्म की हानि, बाढसि असुर अधम अभिमानी।
करहिं अनीति जाई नहीं बरनी, सीदहिं विप्र धेनु सुर धरनी।।
तब तब धरि प्रभु विविध शरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

अघोराचार्य बाबा कीनाराम जी के द्वारा 17वीं एवं 18वीं शताब्दी के मध्य मुगल काल में पीड़ित मानवता को त्राण देने हेतु काशी से लेकर कच्छ तक की यात्रा की गयी थी एवं गुजरात में जूनागढ़ गिरनार पर्वत पर भी आदिगुरु दत्तात्रेय से साक्षात्कार के फलस्वरूप उस स्थल को पावन पवित्र, तपः पीठ के रूप में मान्यता दी गयी है। तत्कालीन काल मुगल शासन के अधीन था। जिसमें यत्र तत्र यौवनों, जमींदारों के अत्याचार से पीड़ित जन-जन द्वारा बाबा कीनाराम जी को इष्टदेव स्वरूप देवाधिदेव चलते-फिरते शिवशंकर को आराधना कर प्राप्त किया गया था। बाबा कीनाराम जी ने अखण्ड भारतवर्ष भर में भ्रमण कर न केवल मानवता का उद्धार किया गया बल्कि समाज में प्रचलित कुप्रथाओं का भी संहार किया गया। तत्कालीन समय के अनुसार बाबा अपने योग बल से चमत्कृत कर जनमानस को सन्मार्ग की ओर उन्मुख करते रहते थे।

यानि 'परित्राणाय साधुनां विनाशायश्च दुष्कृताम' की उक्ति को धारण करते हुए लगभग 170 वर्ष तक सामाजिक कुरीतियों से मानव समाज को अघोराचार्य बाबा कीनाराम विरत करते रहे तथा अत्याचार, दम्भ, पाखण्ड, अहंकार, अभिमान का दर्प हटाते रहे। कबीरदास ने भी संतों के आचरण को परिभाषित करते हुए कहा हैं-

वृक्ष कबहु नहि फल भखै, नदी न संचयै नीर।
परमार्थ के कारणे साधुन धरा शरीर।।

इसी कीनारामी अघोर परम्परा को जीवन्त करते हुए उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले के अघोरी बाल साधक के रूप में उदित होकर गुजरात के अहमदाबाद एवं जनपद सुरेन्द्र नगर में बाबा कीनाराम अघोर आश्रम स्थापित करने वाले अखण्ड ब्रह्मचारी के रूप में अघोरी बाबा श्री घनाराम जी किसी परिचय के मोहताज नहीं है। श्री घनाराम जी के द्वारा अहमदाबाद एवं अन्य कई स्थानों में कीनाराम आश्रम की स्थापना कर वहाँ के जनसमुदाय को अपने अद्भुत तपोबल से कृतार्थ करने का सराहनीय कार्य निरन्तरता के साथ विगत 50 वर्षों से जारी रखा गया हैं। बाबा घनाराम जी रसायन शास्त्र के अद्भुत ज्ञात है एवं आयुर्वेद में भी निष्णात हैं। आयुर्वेदिक औषधियों द्वारा न केवल जनसामान्य की सेवा सुश्रूषा कर रहे हैं बल्कि पारद के शिवलिंगों के निर्माण की भी अद्भुत विधा में आप पारंगत हैं। गुजरात के जनता जनार्दन को इनके द्वारा निर्मित पारद शिवलिंगों को प्राप्त कर पूजा-अर्चन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है तथा अहमदाबाद के इन्डिया कालोनी, बापू नगर, त्रिमूर्ति काम्प्लेक्स के पीछे अवस्थित कीनाराम आश्रम में एक दिव्य पारद शिवलिंग की स्थापना भी की गयी है। अहमदाबाद के अतिरिक्त जनपद सुरेन्द्र नगर में भी फक्कड़ फकीर अघोरी बाबा घनाराम के द्वारा कीनाराम आश्रम की स्थापना की गयी है तथा वहाँ भी जनता जनार्दन को अपने तपोबल से स्वस्थ एवं सुखी रखने का चमत्कारिक प्रभाव दृष्टिगोचर है।

औघड़ सम्राट परम पूज्य बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी की अध्यक्षता में सतत् कार्यशील अध्यात्मिक, सामाजिक संस्था अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं संस्थान, क्रींकुण्ड, वाराणसी का एक प्रतिनिधि मण्डल दिनांक 23 सितम्बर 2015 को अहमदाबाद स्थित कीनाराम स्थल में पूज्यपाद महन्थ श्री घनाराम बाबा के दर्शनार्थ उपस्थित हुआ। प्रतिनिधि मण्डल के सदस्यों में अघोरी श्री श्री ज्ञानचन्द बाबा, श्री श्यामनारायण पाण्डेय, वरिष्ठ औघड़ साधक, वाराणसी, श्री विपिन कृष्ण मुरारी शर्मा (बब्बु भाई) मुम्बई एवं श्री कमलेश यादव उपस्थित थे। बाबा घनाराम जी के सेवा को शत शत नमन करते हुए उनके दीर्घ जीवन की कामना की जाती है।

शरद-पूर्णिमा (निःशुल्क) दवा-वितरण

शरद पूर्णिमा के अवसर पर हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान, क्रींकुण्ड, वाराणसी के सौजन्य से 26 अक्टूबर 2015 दिन सोमवार को हजारों मरीजों/श्रद्धालुओं को आयुर्वेदिक (शास्त्रीय) पद्धति से शोध की गयी औषधि का वितरण रात्रि 12 बजे तक किया गया। श्वास, दमा, एलर्जी के निवारण हेतु पूर्व में ही इच्छुक व्यक्तियों का पंजीकरण क्रींकुण्ड के रजिस्टर में स्वयंसेवकों द्वारा किया जा रहा था एवं इसकी सूचना समाचार पत्रों द्वारा भी प्रकाशित करायी गई थी। लगभग दो हजार से अधिक व्यक्तियों का नाम एवं उम्र रजिस्टर में दर्ज किया गया।

निर्धारित दिनांक 26 अक्टूबर 2015 को सायं से ही स्थल परिसर श्रद्धालुओं/मरीजों से पटने लगा तथा रात्रि 10 बजते बजते काफी भीड़ होने पर ध्वनि विस्तारक यंत्र से भीड़ को नियंत्रित किया जाता रहा। इस हेतु समस्त महिला एवं पुरुष वर्ग को पण्डाल में बैठकर प्रतीक्षा हेतु कहा गया तथा बीच-बीच में बाबा कीनाराम की जय, अघोरेश्वर की जय, पीठाधीश्वर जी की जय का जयघोष अन्तराल पर समवेत श्रद्धालुओं द्वारा लगाकर किया जाता रहा तथा ध्वनि विस्तारक यंत्र से यह हिदायत दी गयी कि समस्त स्त्री एवं पुरुष कतारबद्ध एवं अनुशासित ढंग से दवा प्राप्त करेंगे तथा रात्रि 12 बजे एक साथ ही ग्रहण करेंगे, इस हेतु रात्रि लगभग पौने ग्यारह बजे से ही दवा का वितरण किया जाता रहा तथा दवा सेवन करने वालों को हिदायत भी दी जा रही थी कि वे दवा पान के पश्चात् जल ग्रहण न करे न तो कम से कम दो घंटे तक शयन ही करें बल्कि दवा पान के उपरान्त कम से कम दो घंटे तक पैदल चहलकदमी करते रहे, जिससे रवीन्द्रपुरी की सड़क स्थल से लेकर पद्मश्री चौराहा तक पर काफी चहल-पहल बनी रही। दवा पीने के पूर्व सभी सेवनकर्त्ताओं से आग्रह किया गया कि वे आगामी एक पखवारे तक तम्बाकू, गुटखा पान, बीड़ी, सिगरेट आदि मादक पदार्थों का सेवन न करें तथा एक पखवारे के पश्चात् पुनः स्थल में स्वास्थ्य परीक्षण हेतु प्रतिभाग करें ताकि उचित परामर्श दिया जा सके।

इस अवसर पर पर्याप्त स्वयं सेवकों के साथ ही गणमान्य अघोर भक्त मण्डली सर्वश्री अरुण सिंह व्यवस्थापक, डॉ0 संगीता सिंह, रणजीत सिंह (एडवोकेट), सूर्यनाथ सिंह, धनन्जय जी, नाना, वीरेन्द्र जी, अंशू मिश्रा, डब्बू, पूर्णेश्वर जी, मुन्ना, गोलू, नवीन इत्यादि ने प्रतिभाग किया एवं कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न किया गया।

मैं आपके अनुकूल होकर रहूँ, महापुरुषों और महात्माओं के बीच मैं सद्भाव का पात्र बन कर रहूँ

पृष्ठ चार का शेष

ढूँढ़ेंगे नहीं। वह तो स्वयं दिखेगा। स्वयं यदि हम द्रष्टा होकर, ठीक, स्वच्छ, चक्षु से। मेरी वाणी स्वच्छ हो मेरा श्रवण स्वच्छ रहेगा तो अपने आप पर वह आवाज वह वैसा ही सुनाई पड़ेगा जैसा कि मेरे अनुकूल हो और हमारे चक्षु खुलने पर उसकी जो सुन्दरता है, उसका जो तेज है, कण है, चाहे वह अंधकार का हो, या प्रकाश का, वह तेज कण हमें बहुत सुमधुर, बहुत सुखप्रद मालूम होगा कि जैसे किसी को अह्लाद। किसी का गला घोंट दिया जाये, दबा दिया जाये और वह बहुत व्याकुल हो। फिर छोड़ दें। बाहर निकल कर वह साँस लेता है। कहता है ऐसा आह्लाद, ऐसा सुख, ऐसी चाँदनी, ऐसी शीतलता मुझे कितना आनन्द आता है। कितना आनन्द आता है, कितना आनन्द आता है और इसी तरह की पूजाओं का आज दिन है। आज यह रात्रि भगवती भवानी की आविर्भाव की रात है। उनके आविर्भाव, वह वायु, कम्पन, वह तेज, वह कांति और वह बड़े-बड़े, छोटे-छोटे अणुओं में, हमारे शरीर में प्रवेश करते हैं। हमें उत्तेजित करेगा, हमें उत्साहित करेगा। हमें एक बड़े अजीब तरह के सुख की तरफ, अजीब तरह के मिठास की तरफ, अजीब तरह के हँसी की तरफ ले चलेगा जिससे मैं अपने आपको संतुष्ट समझूँगा, अपने आपको मैं आनन्दमय समझूँगा, अतौल मानूँगा। बिल्कुल पूर्ण समझूँगा फिर अपूर्ण अपना जीवन नहीं रहेगा। तो आज ही, यदि संकल्प करके वह वस्तु प्राप्त हो रहा है तो उनका इच्छा भी करें मगर इच्छा, बन्धु, दुर्बल आदमी करता है। संकल्प, दृढ़निश्चय वाला करता है।

शेष अगले अंक में

मैं आपके अनुकूल होकर रहूँ, महापुरुषों और महात्माओं के बीच मैं सद्भाव का पात्र बन कर रहूँ

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्म बन्धुओं!

हमारे भविष्यनिधि बच्चों! यह नवरात्र का अष्टमी दिन है। इस अष्टमी तिथि के शुभ अवसर पर, संध्या बेला में, हम लोग एकत्रित होकर चिन्तन कर रहे हैं, मनन कर रहे हैं, बहुत श्रद्धा, विश्वास के साथ। वह भवानी, माता की। दुर्गा, काली चण्डी, अनेकों नाम से एक ही शक्ति एक ही तरंग अनेकों रूप नाम से वे जानी जाती है। माँ भगवती से निवेदन करते हैं लोग, हमारे भारतवर्ष में। हमारी मातृभूमि एक ऐसा गौरव है इस देश में, हम लोग, ध्यान बनाये रहते हैं। यदि ऐसा ही प्रयास रहा, सुचारू चलता रहा तो हमारे आने वाले पुत्र-पौत्र, वह भी अच्छे सुख और शान्ति की राह पर चलेंगे। इस भूमण्डल पर देव तुल्य रूप धारण करेंगे। वह माता सभी क्षेत्रों में सभी प्राणियों में भी पायी जाती हैं।

आप उसे स्पर्श कर सकते हैं, सुन सकते हैं। मैं नहीं कह सकता कि आप उसे अभिव्यक्त कर सकते हैं कि नहीं। क्योंकि बहुत सा बात सिर्फ जाना ही जाता है और सिर्फ अनुभव ही किया जा सकता है और वह अनुभव बहुत से लोग करते हैं पर अभिव्यक्त नहीं करते हैं। और बहुत से लोग अनुभव ही किये, ध्यान से किये मगर उसे अभिव्यक्त नहीं किये। वह प्रेरणा नहीं दी किसी को अभिव्यक्त करने की, ललिता, वह ललित कण्ठ, सुमधुर। मन खिल जाता है। वह वैसा ही स्वर हो जाता है उनका। अभिव्यक्त करने में भी आप स्वयं ही जान पायेंगे। समझ जायेंगे। बिल्कुल मनुष्य प्राणी तो सन्देह नहीं करेंगे और जो भी प्राणी हैं, उन्हें भी संदेह नहीं होगा और उन प्राणियों से अपने मैत्री, स्नेह, प्यार, प्रेम लगातार बढ़ता जाएगा। आप आत्मनिर्भर हो जायेंगे। सुखी होंगे शान्ति को प्राप्त करेंगे। आप सभी सुमधुर वाणी वाले हो जायेंगे। आपके स्वर में ओज होगा, ताजगी होगा, मन में प्रसन्नता होगा। स्वच्छ भावनाओं से आप ओत प्रोत, जीने के लिये प्रेरित होंगे।

बन्धुओं! ऐसे सुअवसरों की तलाश में बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, महात्मा-महर्षि सज्जन जन-सन्त, विद्वान रहते हैं। उन्हें भी अपरिचित रह जाना पड़ता हैं जब तक कि उनकी कृपा न हो। उनकी दया न हो। उनको हमलोग ढूँढ़ते हैं। वैसा ही वह भी हमें ढूँढ़ती हैं। हम कहाँ हैं। किस तरफ चले गये हैं। बराबर हमें वह ढूँढ़ती हैं और हम स्थिर नहीं हो पाने के करण हमें उनसे मुलाकात नहीं हो पाता है और हम कहते फिरते हैं कि वह हमको भूल गई। हम उन्हें ढूँढ़ते-ढूँढ़ते परेशान हो जाते हैं और वह हमें ढूँढ़ते-ढँढ़ते।

हमारी इस अस्थिरता के कारण। चंचल मन भटकता दिन राती।

जिसका चित्त चंचल हैं, मन चंचल है, वह भटकता रहता है। वह स्थिर नहीं हो पाता और स्थिर नहीं हो नहीं पाता है तो समझ नहीं पाता है कि वास्तव में वह क्या है, क्या नहीं है।

न समझने के कारण वह बहुत लोगों पर उखड़ खड़ा होता है, अपने प्रियजनों, दोस्तों से उसे स्नेह नहीं रहता है। अपने आप से भी वह उलझ जाता है अपने आप पर भी वह खफा हो जाता है, गुस्सा में आ जाता है। उस व्यक्ति का उस प्राणी का, क्या कहेंगे कमजोरी कहेंगे या ईश्वर की दया नहीं कहेंगे।

ईश्वर की बहुत अनुकम्पा है, दया है। उस ईश्वरी, परमेश्वरी, भगवती, भवानी की बहुत कृपा है, बहुत कृपा है। (हम उसके पात्र भी नहीं बन पाते हैं) यदि हम उसका पूर्ण पात्र हैं तो अंगीकार कर पाते हैं।

बहुत से अच्छे से अच्छे स्थान पर पहुँच जाता है। जाने कब पहुँच जायेगा। वह बड़े-बड़े लोगों के पास, अच्छे-अच्छे लोगों के पास। राष्ट्र का नायक है और दुनिया के जो नायक है वहाँ तक पहुँच गया। मगर यदि वहाँ ठहराव नहीं है उसका (तो सब व्यर्थ है) जिस व्यक्ति का वहाँ ठहराव है तो उसका पहुँचना सार्थक है। चाहे वह बड़े से बड़ा जगह हो या छोटा से छोटा हो। चाहे वह अच्छे ज्ञानी हो, या सामान्य से सामान्य व्यक्ति हो।

तो बंधुओं! ऐसी स्थिति में, ऐसी मनोदशा की व्यथा में हम व्यथित हो ही जाते है। समझना चाहिये कि मुझे महामाया के मोह ने ग्रसित कर रखा है। देखते है पक्षियों को भी अपने भूख से, अन्न जल रहित होकर, पीड़ित होकर भी बहुत चाव से अन्न के कण उठाकर अपने बच्चों के मुख में डालते हैं। जिससे कि क्षुधा में न रहें बच्चे। सयान होयें। और वह बच्चे सयान होने पर करते क्या हैं? उनको पंख मिला और चले गए अपना दाना-पानी जुटाने। उदर भरने लगे और वहाँ कौन पक्षी कौन माता-पिता का है, किसका है? बच्चे सब पशु-पक्षी के ही होता है। मनुष्य के बच्चे नहीं होते। मनुष्य के पुत्र होते हैं, पौत्र होते हैं। मनुष्य के सज्जन होता है उसकी आत्मा होती हैं। यदि वह भी उसका पंख जम गया और वह उड़ गया तो वह बच्चे ही समझा जायेगा, पक्षियों के बच्चा की तरह जिसके लिए उसके माता-पिता ने हर दुःख सहकर, हर कठिनाई सह कर और वह अन्न के कणों को उठाकर उन्हें चुगाया। मनुष्य भी ऐसा ही करता है। यह मेरा कथन नहीं है। यह सुमेधा ऋषि का कथन है। सुमेधा ऋषि ने उस पक्षी को दिखाकर, उस वृक्ष पर, यह समाधि और सुरथ कह रहे हैं कि महाराजा सुरथ देखो। यह पक्षी यह जानती है। इसको सब बात का ज्ञान है। हित अनहित सबको समझती है कि यह हमारा हित है यह हमारे अनहित करने वाले है। यह समझती है कि यह बच्चे पर जमने के बाद हमारे कोई काम नहीं आयेंगे। हम कब बीमार पड़े, कब अस्वस्थ हुए, कब फिर चले जायेंगे, कब मेरी वृद्धावस्था होगा, हमें कब पानी चाहिए, कब औषधि चाहिए। (क्या इतनी स्वीकृति मेरे लिए नहीं है) कहाँ रहेंगे हमारे पुत्र....।

संकल्प होना चाहिए। पुत्रों को पथ से नहीं विचलना चाहिए। हमारे लिए कुछ करेगा, वही उसके लिए भी कल, वैसा करना चाहिये। जो हमारे जैसा व्यवहार व्यवस्था करेगा, वही चीज उसका भी होना चाहिए.....।

ऐसे परम्परा का आदत डालना गलत परम्परा है। यह मनुष्यों की सूझ बूझ में नहीं आता और इन्हीं सब दिन रात के लिए हम उस भगवान भगवती परमात्मा से प्रार्थना करते हैं, ईश्वर से प्रार्थना करते हैं हे मातः, अब मुझे दिव्य ज्ञान देकर, दिव्य चक्षु देकर, दिव्य श्रवण देकर, दिव्य वाणी देकर कृत कृत्य करें। क्योंकि मन के वन में भटकते-भटकते, न मालूम कितना जन्मों से भटकते, कितना जीवनों से भटकता ही रहा, भटकता ही रहा। कब तक भटकता रहूँगा। भगवान ईश्वर, मैं बहुत नाच लिया। इससे थक गया हूँ अब। अब मुझे एक पथ दो। इस पर बैठा दो। चला नहीं जाता...।

ये सब विचार, भावनाओं के साथ अपने जो जीवन जीने की शैली उस तरह भी कम होता हैं बन्धुओं और ऐसा ही जीना जीने सरीखे होता है और नहीं तो बहुतेरे जीवन है जो अपना मोह से ग्रसित पड़े हैं, व्यथित हैं, कलह से ग्रसित हैं और सोचता है कि हमारा सूरत और सीरत हमारा यह स्वास्थ्य, हमारा यह घर, हमारा यह परिवार, हमारा बन्धु, यह सदैव बना रहे। जल रहा है संसार अपने सुन्दर काया जल रहा है।

इसी निमित्त वह महामाया-भुवनेश्वरी जगदम्बा, चाहे वह पृथ्वी माता हो, चाहे वह दिशायें की माता हो, चारों दिशाओं की चाहे वह अपने आप में हमारी जो आत्मिक शक्ति है, आत्मा की, हमारी प्राणमयी माता हो। या समाज की विभूतियों का, दसों महाविद्याओं का देवताओं के उपासक भी हैं, इंसान के भी उपासक हैं। शीतलता के भी उपासक हैं न शीतलता के भी हैं। देवी के उपासक भी हैं, अच्छे कर्म, अच्छे कृत्य करें और वह अच्छे को समझकर, जानकर, बूझकर वह अतौल की तरह रहें। अपने को किससे तौलना है? कितना सुख, कितना शान्ति, कितना शीतलता मिलता है। यदि हम हर जगह, हर क्षेत्र में कंगला जायें, इस मनुष्य जीवन में घटियापन इससे ज्यादा और क्या हो सकता है? हर जगह मैं तौला जाऊँ, हर बटखड़े से मैं तौल दिया जाऊँ, हर तराजू पर मैं चढ़ा दिया जाऊँ तो मेरे से बड़ा घटिया कौन है?

हम कुछ और ही हैं। हम कुछ भिन्न है। हम ऐसे भिन्न हैं कि एक-एक दो नहीं है। एक-एक ग्यारह हैं। दस गुणा ज्यादा है। ऐसा अतौल। एक-एक दो होता है, एक-एक ग्यारह नहीं होता। तो यह जो जीवन का परिलक्षित उत्तम विचार है, भावनायें है, इसे हमें अंगीकार करना, ग्रहण करना यह हमारे लिए कितना उत्सुकता, आनन्द और सुख और समृद्धि देने वाला होगा। तो हमें बन्धुओं, आज जो आप लोगों से बातचीत कर रहे हैं, आज जो आप लोगों ने जो विचार और जो भावनाओं की बातचीत करने का मौका दिया अपने बीच बैठाकर, इसके लिए मैं बहुत प्रसन्न हूँ।

आज अष्टमी की रात है। आज भगवती देवी का हवन है, पूजा है। अपना भी व्यक्तिगत मानसिक चिन्तन है। हँसी है, खुशी है। हँसी और खुशी और उत्साह को इस प्रकृति में, नेचर में, जो खुली वायु हैं, खुली हवा हैं, इन दीवारों में इन कपड़ों में, इनकी जो कम्पन है, इन झाड़ियों में उन्हें

शेष पृष्ठ तीन पर

अघोर सूत्र

☞ **एक हजार गाय वध करने के जितना पाप लगता है एक शिष्य को बनाने में। सारा शिष्य का जिम्मेवारी गुरु पर होता है। यदि शिष्य दुराचारी निकला, अपराधी निकला, पापी निकला और दिन-रात घटिया काम में लगा हुआ है, तो उसका कौन अपराध, कैसे पचाएगा?**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी